REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514
VOLUME - 8 | ISSUE - 9 | JUNE - 2019

विवेकानन्द चिंतन में सामाजिक रूपांतरण एवं उसका प्रभाव

उमराव सिंह यादव
शोधार्थी, दर्शनशास्त्र विभाग, राज ऋषि भर्तृहरि मत्स्य विश्वविद्यालय, अलवर.

उद्देश्य

प्रस्तुत शोध–पत्र में विवेकानन्द के समाज दर्शन पर प्रकाश डाला गया है। सामाजिक परिवर्तन क्या है? तथा यह सामाजिक परिवर्तन क्यों आवश्यक है? तथा विवेकानन्द के मत में इस परिवर्तन के मुख्य आधार क्या हैं? तथा सामाजिक परिवर्तन में इसके प्रभाव की प्रासंगिकता का विश्लेषण प्रस्तुत किया जायेगा।

मुख्य बिन्दु : सामाजिक परिवर्तन, आदर्श समाज व्यवस्था.

शोध सारांश

सामाजिक रूपान्तरण एवं परिवर्तन की विवेचना समाज के उद्भव से आरम्भ होती है। विवेकानन्द के अनुसार समाज के निर्माण का आधार नैतिक ही है। जब व्यक्ति अपनी स्वार्थपूर्ण प्रवृत्तियों से ऊपर उठता है तभी उस समाज का आविर्भाव हो पाता है। यदि व्यक्ति स्वार्थपरख प्रवृत्ति से ऊपर उठ पाता है तो ही एक अच्छे समाज का प्रादुर्भाव हो पाता है। लेकिन व्यक्ति स्वार्थमूलक प्रवृत्तियों में समाहित होकर ही कार्य करे तो वह संघर्ष और हिंसा का रूप धारण अवश्यम्भावी हो जाता है। उसी हिंसा से बचने का एक मार्ग नैतिक समाज–निर्माण है। विवेकानन्द सम्पूर्ण सामाजिक प्रणाली की बुराईयों का उन्मूलन करके समानता बंधुत्वता और स्वतन्त्रता के सिद्धानतों पर आधारित सामाजिक प्रणाली की पुनर्रचना करना चाहते थे। जिसमें अंधविश्वासी समाज को सही दिशा मिल सके।

विवेकानन्द के शिष्यों ने लिखा है कि विवेकानन्द बाल्यावस्था में जाती के निमयों का घोर विरोध करते थे। विवेकानन्द ने बहुविवाह, बाल–विवाह, विधवा महिलाओं के सती होने के विरुद्ध संघर्ष किया जो भारत की प्रगतिशील विचारधारा में पूर्ण समाहित है। इस विचारधारा से राष्ट्र में विवेकानन्द एक आदर्श समाज को बढ़ावा देना चाहते थे।

प्रस्तावना

निजी स्वार्थ का त्याग व समाज में व्याप्त अंधविश्वासी आडम्बरों, सामाजिक कुरीतियों से मुक्त होकर ही एक स्वच्छ व समानान्तरीत समाज का निर्माण किया जा सकता है। विवेकानन्द जिस तरह से अस्पर्शयता का घोर विरोध करते थे उसी प्रकार देश में स्वतन्त्रता की अलख जगाने वाले गांधी ने भी छुआछुत अस्पर्शयता आदि का घोर विरोध किया।

सामाजिक परिवर्तन

समाज के किसी भी क्षेत्र में विचलन जो सामाजिक परिवर्तन कहा जाता है। धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, नैतिक सभी क्षेत्रों में होने वाले किसी भी प्रकार के परिवर्तन को ही सामाजिक परिवर्तन कहा जाता है। परिवर्तन या तो समाज के सम्पूर्ण ढांचे में आ सकता है या किसी एक विशेष पक्ष या क्षेत्र तक सीमित हो सकता है लेकिन परिवर्तन एक सर्वकालीन घटना है और किसी न किसी रूप में निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। जब–जब भी समाज के स्वरूप व उसकी संरचना में कोई दोषपूर्ण रूप से जन्म लेता है। तभी उस दोषपूर्ण रूप को खत्म करने के लिए

परिवर्तन आवश्यक हो जाता है। यह एक गात्यात्मक प्रतिक्रिया है। जो समय के अनुसार परिवर्तित होती रहनी चाहिए। जिसमें समाज में व्याप्त कुरितियों का निराकरण किया जा सके।

विवेकानन्द और सामाजिक परिवर्तन व उसका प्रभाव

एक विकासशील समाज का गुण समाज की गत्यात्मकता पर निर्भर करता है। विवेकानन्द ने तात्कालिक समाज में विद्यमान विभिन्न परम्पराओं पर पुनर्विचार कर आग्रह किया तो कुछ नये विचारों को ग्रहण कर आत्मसात करने का विश्वास भी विचारों को ग्रहण कर आत्मसात करने का विश्वास भी दिखाया इस समाज में व्याप्त विभिन्न विकृतियों व कुरितियों से निवारण के लिए भरसक प्रयास किया लेकिन उनमें से अनेक तरह के आज भी विद्यमान हैं। जिनको दूर करने के लिए विवेकानन्द चिन्तन आज भी प्रासंगिक है। स्वामी विवेकानन्द ने सामाजिक परिवर्तन के विभिन्न तत्वों जैसे भाषा, धर्म, जाती, वर्ग, छुआछुत के नाम पर अपने विचार समाज के सामने रखे। तथा समाज में व्याप्त इस तरह की समस्या के निदान के लिए घृणा, निंदा, हिंसा के आधार पर नहीं बल्की सहजता, प्रेमपूर्वक के ऊपर आधारित करते हुए निराकरण किया।

आध्यात्मीकता व धार्मिकता ही विवेकानन्द चिन्तन का केन्द्र बिन्दू है। विवेकानन्द का सामाजिक दर्शन श्रीमदभागवतगीता के कर्मयोगी के अवधारणा में प्रेरित है विवेकानन्द का मानना है कि सामाजिक स्वतंत्रता के आधुनिक पश्चिमी विचारों के स्वतंत्रता की परम्परागत भारतीय धारणा से तालमेल बैठाने की जरूरत है। वैसे भारतीय धारणा परम्परा में स्वतंत्रता को देश और काल की सीमाओं से परे एक शाश्वत मूल्य तौर पर समझा जाता है। विवेकानन्द के अनुसार व्यक्ति को सच्ची स्वतंत्रता तभी मिल सकती है। जब हर व्यक्ति मानसिक परतंत्रता और हीनता की भावना में मुक्त होकर अपने वास्तविक स्वरूप को दर्शन कर पायेगा। विवेकानन्द का यह भी मानना था कि व्यक्ति को सच्ची स्वतंत्रता, सामाजिक सोहार्द्व की भावना व सामाजिक कर्त्तव्य पालन से ही मिल सकती है।

एक ओर अंग्रेजों के समय में सोमेश चन्द्र दत्त और दादाभाई नौरोजी जैसे महान विचारक में जो भारत की गरीबी के लिए अंग्रेजों को जिम्मेदार मानते थे। लेकिन विवेकानन्द की अपनी अलग सोच के कारण मानना था की एकाकीपन और अवरोध, एकता का अभाव, महिलाओ की खराब हालत और आम जन के हितों की अनदेखी ही भारत की दूर्दशा का मुख्य कारण बनी हुई थी। महान दार्शनिक हीगल की भांति वह भी सिकंदर, चंगेजखां, नेपोलियन के व्यक्तित्व से प्रभावित थे। हालांकि हीगेल को तरह इतिहास को कभी दार्शनिक की तरह देखने का प्रयास नहीं किया। लेकिन व्यक्ति बनाम राज्य की हीगेल की अवधारणा का विवेकानन्द पर असर दिखता है। हीगेल की भांति विवेकानन्द का यह मानना था कि प्रत्येक देश का कोई न कोई बुनियादी सिद्धान्त जरूर होता है। जो भारत के संदर्भ में धर्म है।

अगर वर्ग संघर्ष की बात करें तो व्यक्तिवाद और समाजवाद में सामंजस्य साधते हुये विवेकानन्द ने इस अवधारणा को खारिज किया। विवेकानन्द की सामाजिक अवधारणा वैज्ञानिक कम और मानवतावादी ज्यादा थी।

विवेकानन्द आदर्श समाज में जाति आधारित अंधविश्वासों को सबसे बड़ा रोड़ा मानते थे। विवेकानन्द के जाति आधारित व्यवस्था के बजाय एक सौर्हाद्रपूर्ण समाज पर बल दिया सेवा को सबसे बड़ी पूजा मानते हुए वर्तमान के सभी सामाजिक संघर्षों का समाधान माना।

विवेकानन्द कहते हैं ''मैं मनुष्य जाती से यह मान लेने का अनुरोध करता हूँ कि कुछ नष्ट न करो विनाशक सुधाारक लोग संसार का कुछ भी उपकार नहीं कर सकते। किसी वस्तु को तोड़कर मिट्टी में मत मिलाओं बल्कि उसका गठन करो। अगर हो सके तो एक दूसरे की सहायता करो नहीं तो स्वयं में चुप रहो। स्वामी विवेकानन्द विनाशक नहीं रचनात्मक समाज सुधार के पक्ष धर हैं। जो कि उन्हें अपने दौर के समाज सुधारकों से विलक्षण बनाता है।

विवेकानन्द का भारत की मूल शक्ति आध्यात्मीकता पर गहरा विश्वास था। विवेकानन्द की आध्यात्मिकता छोटा अर्थ लिये आध्यात्मिकता नहीं है। बल्कि उसमें धार्मिक अंध नियमों से मुक्ति की अभिलाषा है। सम्पूर्ण और सर्वव्यापी आत्मा का बोध है। वह अनेकता में एकता का अधिष्ठान है। समस्त सामाजिक परिवर्तन अपने भितर काम करने वाली आध्यात्मिक शक्तियों के व्यक्त रूप होते हैं। इस धरा पर आध्यात्मिक सुधार हुये बिना अन्य किसी प्रकार के सुधार की कल्पना नहीं कि जा सकती।

स्वामी विवेकानन्द भारत की सामाजिक जड़ता और अवनती के प्रमुख कारण के रूप में मौलिकता के अभाव से देखते हैं। वे मानते हैं कि नया करने की हमारी शक्ति नष्ट हो चूकी है। स्वामी जो बात अपने युग में बताते है कि अन्न बिना हाहाकार बन रहा है पर दोष किसका है लोग केवल चिल्लाते रहते हैं उन्हें झोपड़ी के बाहर निकलकर देखना चाहिए कि दुनिया के लोग किस प्रकार उन्नति कर रहे हैं। जिससे आवश्यक कर्तव्य कि ओर ध्यान आकृष्ट होगा।

स्वामी जी ने समाज परिवर्तन के लिए किसी एक वर्ग या समुदाय के परिवर्तन के पर्याय को पर्याप्त नहीं माना। जब तक सभी इस दिशा में तत्पर नहीं होंगे तब तक यह बदलाव अधुरा ही रहेगा। इसलिए ये युवा, स्त्री, निर्धन कामगार किसान सभी को जगाने के अभिलाषी है। स्वामी जो सभी को विचारवान बनाना चाहते हैं वही आचरण की शुद्धता पर बल देते हैं, स्त्री शिक्षा पर उन्होंने विशेष बल दिया। जिससे स्त्री स्वयं को भाग्यविधता बना सके। नारी को ऐसी स्थिति में पहुंच जाना चाहिये जहां वे अपनी समस्या का स्वयं समाधान कर ले। विवेकानन्द ने सामाजिक बदलाव में महत्वपूर्ण भूमिका युवाओं की बताई है। युवाओं के माध्यम से देश का पुनरूत्थान हो सकता है। विवेकानन्द जागरण के लिए कहते है कि– हे युवा! उठो जागो तुम्हारी मातृभूमी को इस महाबलि को आवश्यकता है। इस कार्य की सिद्धि युवा से ही हो सकेगी। युवा ही है तो सामाजिक परिवर्तन के क्रम में प्रभावकारी परिणाम ला सकते हैं। युवाओं में आंतर और बाह्य दोनों प्रकार की शक्तियों का अधिष्ठान विद्यमान रहता है।

विवेकानंद ने भारत के नव परिवर्तन का विराट बिंब रचा है जो सदियों की जड़ता को त्याग कर ही आ सकता है। विवेकानन्द पहले खुद को निश्शेष करने का आवाहन इसी अर्थ में करते हैं। तूम लोग शून्य में विलीन हो जाओं ओर फिर एक नवीन भारत निकल पड़ेगा। वर्तमान के दौर में स्वामी विवेकानन्द की यह आवाज सुनी जानी चाहिए अन्यथा की दूरावस्था की श्रृंखला असमाप्त बनी रहेगी।

स्वामी विवेकानन्द ने एक उत्कृष्ट समाज के लिए शिक्षा को ही समाज में अभिन्न योगदान बताया। और शिक्षा प्रदान हमारा पहला कार्य होना चाहिए नैतिक तथा बौद्धिक दोनों ही प्रकार की। विवेकानन्द ने बताया की शिक्षा का मतलब यह नहीं कि दिमाग में ऐसी बहुतसी बातें इस तरह ठूंस दी जाये कि अंर्तद्वंद्व होने लगे। और तुम्हारा दिमाग उन्हे जीवन भर पचा न सके। जिस शिक्षा से हम अपना जीवननिर्माण कर सके और एक मनुष्य बन सकें, चरित्रवान कर सके। और विचारों का सामंजस्य कर सके। यही शिक्षा है और इसी शिक्षा से एक सुव्यवस्थित समाज का निर्माण कर सकें। हमारा आदर्श यह होना चाहिये कि अपने शब्द की समस्त आध्यात्मिक और लौकिक शिक्षा के प्रचार का भार अपने हाथों में ले लें और जहां तक संभव हो राष्ट्रीय रीति से राष्ट्रीय सिद्धान्तों के आधार पर शिक्षा का विस्तार करे। समाज की सर्वोच्च अभिलाषा होनी चाहिए कि ऐसा चक्र वर्तन कर दो की वह उच्च एवं श्रेष्ठ विचारों को सबके द्वार द्वार पहुंचा दे। और फिर स्त्री पुरुष अपने निर्माण में अपनी भूमिका अदा करें। विचार और कार्य एक आदर्श समाज के लिए उतनी भूमीका रखते हैं जितनी के एक सुसभ्य स्त्री और पुरुष के लिए।

एक आदर्श समाज की परिकल्पना तभी कि जा सकती है। जब उसमें तीन बातें विद्यमान हो–

1. सदाचार की शक्ति में विश्वास
2. ईर्ष्या ओर संदेह का परित्याग
3. जो सत् कर्म करने के लिए यत्नवान हो उनकी सहायता करना।

एक नवीन समाज निकल पड़े। निकले हल पकड़कर, किसानों को कुटी भेदकर, मधुआरा, माली, मोची, मेहतरों सी झोपड़ियों से। निकल पड़े बनियों की दुकानों से, भुजवा के भाड के पास से, कारखानें से, हाट से, बाजार से, निकले झाड़ियों, जंगलों, पहाड़ों, पर्वतों से!..... अतीत के कंकाल समूह। यही है इस मनुष्य के सामने उत्तराधिकारी भावी समाज। ये तुम्हारी रत्नपेटिकाएँ, तुम्हारी मणि की अंगुठियाँ, फेंक दो इनको जितनी शीघ्र फेंक सको। फेंक दो और इस वायु में विलीन हो जाओ, अदृश्य हो जाओ। सिर्फ और सिर्फ कान खड़े रखो! उसी समय सुनोगे समाज की उद्‌बोधनध्वनि ''वाह गुरु की फतह!''

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. विवेकानन्द साहित्य (2014), भाग–प्रथम से दशम, अद्वैत आश्रम, कोलकाता
2. विवेकानन्द, स्वामी (2017), विवेकानन्द साहित्य संकायल, रामकृष्ण मठ, नागपुर

3. तेजमानन्द, स्वामी (2017), संक्षिप्त जीवनी, एण्हाली रोड, कोलकाता
4. समाचार पत्र व शोध पत्रिकाएँ
   – यंग इण्डिया
   – विवेकानन्द केन्द्र पत्रिका, मद्रास
   – शोध पत्र